P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-6* September- 2017
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में भारत की भूमिका

सारांश

तृतीय विश्व की समुचित भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग की गई है। इस मांग के तहत उन वैश्विक आर्थिक व व्यापारिक नियम व मानदण्डों में परिवर्तन हेतु दबाव बढ़ा जिससे कि विश्व स्तर पर एक उत्तरदायी पारदर्शी सहयोगी एवं संवेदनशील अर्थव्यवस्था का बहुआयामी विकास हो। यह एक ऐसी व्यवस्था है जो समतामूलक, न्यायमूलक व सहभागी प्रवृति पर आधारित है। यह भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया का एक घटक है। भारत ने विकासशील देशों के साथ मिलकर नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का समर्थन ही नहीं किया बल्कि न्यायोचित परिस्थितियों में लागू करने पर बल दिया है। भारत नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की घोषणा कराने में ही अग्रसर नहीं रहा है बल्कि अपने सुझावों के द्वारा इसे वास्तविक रूप प्रदान करवाने हेतु भी कार्यरत रहा है।

मुख्य शब्द : नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, भूमण्डलीकरण, प्रभुसत्तासम्पन्न समानता, परस्पर–निर्भरता, शीत युद्ध, गैट, विश्व व्यापार संगठन, उदारीकरण, विकासशील राष्ट्र, विकसित राष्ट्र, उदारीकृत विनिमय दर प्रणाली, वैश्विक।

सुलोचना
शोध छात्रा,
(टी. आर. एफ.)
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय डूंगर महाविद्यालय,
बीकानेर

प्रस्तावना

नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जो समतामूलक, न्यायमूलक व सहभागी प्रवृति पर आधारित है। जो दुनिया के समस्त राष्ट्रों की समुचित स्तर पर भागीदारी सुनिश्चित करते हुये समग्र विकास हेतु वैश्विक परिवेश उपलब्ध कराने पर बल देती है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के 1974 के विशेष अधिवेशन में 'नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ–व्यवस्था की स्थापना का घोषणा पत्र' स्वीकार किया गया।[1] इसमें कहा गया कि वह ''समस्त राष्ट्रों के बीच समता, प्रभुसत्तासम्पन्न समानता, परस्पर–निर्भरता, आम हित तथा सहयोग के आधार पर एक नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ–व्यवस्था की स्थापना के लिए त्वरित गति से कार्य करेगा, विकसित और विकासशील राष्ट्रों के बीच की आर्थिक खाई को पाटने की परिस्थितियां उत्पन्न करेगा तथा वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए निरंतर गतिशील और वृद्धिशील आर्थिक तथा सामाजिक विकास और शांति तथा न्याय को सुनिश्चित करेगा।''

मूलतः नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था इस मान्यता पर आधारित है कि वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था भेदभाव प्रवृति पर आधारित है जिसमें तृतीय विश्व की समुचित भागीदारी सुनिश्चित नहीं है। तृतीय विश्व की समुचित भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग की गई है। इस मांग के तहत उन वैश्विक आर्थिक व व्यापारिक नियम व मानदण्डों में परिवर्तन हेतु दबाव बढ़ा जिससे कि विश्व स्तर पर एक उत्तरदायी पारदर्शी सहयोगी एवं संवेदनशील अर्थव्यवस्था का बहुआयामी विकास हो। विश्व स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के मार्ग में संरक्षणवादी नीतियों पर अंकुश हेतु प्रयत्न हुये ताकि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की पारदर्शिता बरकरार रखी जा सके।[2] पूंजी एवं तकनीक के व्यापक स्तर पर गरीब राष्ट्रों को हस्तान्तरण किए जाने, तृतीय विश्व के राष्ट्रों को व्यापक स्तर पर पूंजी मुहैया कराने हेतु समुचित ठोस मानदण्ड तैयार किए जाने हेतु दबाव बढ़ रहा है। इसी तरह तकनीकों को व्यापक स्तर पर दुनिया के गरीब राष्ट्रों को हस्तान्तरित कर उनकी अर्थव्यवस्था के मूलभूत ढांचों को सशक्त किए जाने की मांग नियो के तहत की जा रही है।[3]

नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक है। डेविड हैल्ड ने भूमण्डलीकरण को सामाजिक संबंधों में एक खिंचाव, प्रवाह की तीव्रता, संस्कृतियों के बीच संबंध बताया है।[4] एन्थनी गिडेन्स ने भूमण्डलीकरण को आधुनिकता का परिणाम बताया।[5] भूमण्डलीकरण के युग में आत्मनिर्भर विकास की कल्पना संभव नहीं है। आपसी सहयोग को विकास का

सशक्त माध्यम बनाना आज विश्व की अपरिहार्यता है। इसी मूल भावना ने क्षेत्रवाद के सहयोगी विकास की व्यूह रचना को जन्म दिया है। ''व्यापक परिप्रेक्ष्य में आर्थिक विकास की व्यूह रचना के अलावा इसे एक तरह का प्रतिरक्षात्मक व राजनीतिक आन्दोलन भी कहा जा सकता है, जो जनतंत्र व मानवाधिकारों की रक्षा के रूप में राजनीतिक व्यवस्थाओं को नया मोड़ देने में सक्षम साबित हो सकता है। इसी सदी के उत्तरार्ध में ऐसे अहम परिवर्तन उभर कर सामने आये हैं। उदाहरण के तौर पर विश्व युद्ध के बाद से इसके कारण पारस्परिक द्वन्द्व एवं सहयोग के संबंध या तो परिवर्तित हुये हैं, धूमिल हुए हैं या और अधिक मुखर हुए हैं।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद आर्थिक विकास एक चुनौती बन गया क्योंकि इस आर्थिक विकास ने वैचारिक द्वन्द्व को जन्म दिया और यह द्वन्द्व शीत युद्ध का आधार बना। युद्ध एवं विकास परस्पर विरोधी होने के कारण जहां वैश्विक स्तर पर समग्र विकास पर जोर दिया जाने लगा वहीं दूसरी और विकासशील एवं पिछड़े राष्ट्रों को विकसित राष्ट्रों द्वारा शोषण का भय और भी वीभत्स बना। विकासशील राष्ट्र के समक्ष जनसंख्या, पोषण तथा आधारभूत समस्याएं सुरसा के मुख की तरह विकराल हो गई। खासतौर से छोटे–छोटे दक्षिण एशियाई राष्ट्रों नेपाल, भूटान, मालद्वीप आदि के लिये दबावमुक्त विकास का सपना, सपना ही रह गया।

यद्यपि भूमण्डलीकरण न तो राजनीतिक अधिकारों का हनन है और न ही आर्थिक शोषण वरन् भूमण्डलीकरण विश्वस्तर पर लोगों एवं संस्थाओं को परस्पर एक–दूसरे से जोड़ने का नाम है न कि विघटन का। यह अत्यन्त व्यापक एवं वृहद्ध है जिसका मूल भाव मानव कल्याण मात्र है। इस प्रक्रिया के माध्यम से राष्ट्रों एवं समाजों में आदान प्रदान हो रहा है तथा अन्तर संबंध स्थापित हो रहे हैं।

आज भूमण्डलीकरण एक नया शब्द बन गया है। इस डेढ़ दशक में बहुत परिवर्तन आया है। तकनीकी स्तर पर आवागमन एवं संचार साधनों ने विश्व को इतना छोटा बना दिया है कि आम आदमी एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र तक जुड़ सा गया है। यह एक अलग बात है कि भूमण्डलीकरण ने प्राचीन आर्थिक तरीकों से परे हटकर एक नवीन आर्थिक स्थिति पैदा की है। जैसे – व्यापार एवं धन में उदारीकरण की नीति ने राज्य नियंत्रण को काफी हद तक हटा दिया है। आज एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में आदान प्रदान कुछ ही क्षण में हो सकते हैं। भूमण्डलीकरण से निवेश की सुविधा, पूंजी का प्रवाह बढ़ना, बाजार का बढ़ना, उत्पादन में वृद्धि, तकनीकी का तीव्र विकास आदि लाभ होते हैं।[6] लेकिन इससे कई नुकसान भी हैं। भूमण्डलीकरण की अवधारणा के सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही पक्ष हैं, किसी भी एक पक्ष को ही महज उचित नहीं ठहराया जा सकता है। लेकिन यह भी सत्य है कि केवल नकारात्मक परिणामों के भय से विश्व विकास का संकल्प नहीं छोड़ा जा सकता है।

विकासशील राष्ट्र विकसित राष्ट्रों द्वारा केवल उपभोक्ता (बाजार) के रूप में ही प्रोत्साहित किए गए। विकसित राष्ट्रों, का यह निर्यात तकनीकी, दक्षता, दक्ष श्रम वित, निर्यात, उत्पादों आदि के रूप में रहा हैं और इसलिये विकसित, विकासशील एवं पिछड़े राष्ट्रों की श्रेणियां उत्पन्न हुई हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा आर्थिक दृष्टि से चिह्नित सूची के अनुसार विश्व के कुल 49 देश पिछड़े विकासशील राष्ट्र की श्रेणी में सम्मिलित किए गए हैं। विकासशील राष्ट्रों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अस्तित्व बनाए रखने के लिए अधिक श्रम करना पड़ रहा है क्योंकि उनके समक्ष विकास की कठिन चुनौतियां हैं।

विकास को अपेक्षित आयाम एवं आवश्यकता अनुरूप करने के लिए आर्थिक क्षेत्र में सदैव नए प्रयोग होते रहे हैं। गैट और विश्व व्यापार संगठन आदि भी इसी दिशा में किए गए प्रयास हैं। यद्यपि इन आर्थिक प्रयासों के उद्देश्य विशुद्ध विकासोन्मुख रहे हैं परन्तु इन प्रयासों के क्रियान्वयन में पक्षपात व असंतुलन हो जाने के कारण उनकी सार्थकता प्रश्न चिह्न मय हो गई है।

विकासशील राष्ट्रों के मन में यह तथ्य सदैव विद्यमान रहता है कि विकसित राष्ट्र उन्हें केवल कच्चे माल उत्पादक उपनिवेश के रूप में न मानकर उनके स्वतंत्र विकास को प्रोत्साहित करे, ताकि विकासशील राष्ट्रों की सम्प्रभुता, विकास की उपलब्धियाँ, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान तथा अपनी नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को खड़ा कर सकें। यही संकल्पना नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की जन्मदात्री है। इसलिए नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की अवधारणा से यही अभिप्राय रखा गया है कि विकासशील एवं पिछड़े राष्ट्र जो आर्थिक स्वावलम्बन के लिए दृढ़ संकल्प है, साम्राज्यवाद से मुक्त होकर अपना विकास करें तथा इस अर्थव्यवस्था का एक अन्य उद्देश्य व्यापार व्यवस्था में अपेक्षित सुधार को समाहित करना भी रखा गया है। विकसित राष्ट्रों ने भूमण्डलीकरण की बात प्रारम्भ अवश्य की है परन्तु उनका उद्देश्य भूमण्डलीकरण के द्वारा साम्राज्यवाद का विस्तार भी है। उनका ध्येय विकासशील राष्ट्रों की आर्थिक आत्मनिर्भरता न होकर वरन् अपने लिए बाजारोन्मुख क्षेत्र के विस्तार के रूप में ही रहा है, जबकि विकासशील राष्ट्रों ने भूमण्डलीकरण की धारणा को वसुधैव कुटुम्बकम के रूप में लिया। वे समस्त विश्व को आर्थिक क्रिया का क्षेत्र मानते हैं जिनमें मुक्त व्यापार, स्वतंत्र अर्थव्यवस्थाएं एवं स्वैच्छिक विकास का अस्तित्व सम्भव है।

नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को केवल किसी नए अर्थतंत्र अथवा नए आर्थिक आयामों की स्थापना के रूप में नहीं समझा जाना चाहिये। वरन यह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक ऐसे परिवर्तन का पर्याय है जिसमें विकासशील राष्ट्र अपनी स्वतंत्र पहचान, राजनीतिक अस्तित्व एवं निर्णायक सदस्य के रूप में उभर सकें। वस्तुतः विश्व स्तर पर विकसित राष्ट्रों की राजनीति ने ही समस्त विकासशील राष्ट्रों के राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पक्षों को प्रभावित किया है जिसे ये विकासशील राष्ट्र प्रभाव मुक्त करना चाहते हैं। नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना अथवा आर्थिक आयामों के अपेक्षित परिणामों की प्राप्ति हेतु विभिन्न आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक पक्षों जैसे नवीन अर्थव्यवस्था की मांग, यूरोप का एकीकरण, अमेरिकी

हस्तक्षेप नीति तथा अधिनायक पूर्ण रवैया, अन्य विकसित राष्ट्रों जैसे ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि का अमेरिका को मुंह बंद समर्थन, अन्तर्राष्ट्रीय आंतकवाद, सीटीबीटी आदि महत्वपूर्ण मुददों पर चिंतन करना आवश्यक है।

साहित्यावलोकन

संतोष तनेजा की पुस्तक, ''इण्डिया एण्ड द न्यू इंटरनेषनल इकॉनोमिक ऑर्डर, (1988) (अमेजन डॉट कॉम) में नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में की गई भारत की भूमिका की व्याख्या मुख्य रहेगी।

डेविड स्मिथ की पुस्तक, 'द ड्रेगन एण्ड द एलिफेन्टः चाईना, इण्डिया एण्ड द न्यू वर्ल्ड ऑर्डर (2008) (अमेजन डॉट कॉम) में किया गया भारत व चीन का तुलनात्मक अध्ययन तथा उदित होते हुए भारत की स्थिति का वर्णन शोध में उपयोगी रहेगा।

मुथू कुमार स्वामी तथा वैंग जियान्गू की पुस्तक ''चाइना, इण्डिया एण्ड द इन्टरनेषनल इकोनोमिक ऑर्डर,'' (जुलाई 2010) (कैम्ब्रीज यूनिवर्सिट प्रेस) में भारत व चीन की भूमिका पर विस्तार से चर्चा की गई है जो इस शोध में उपयोगी रहेगी।

महला अषोक के शोध कार्य ''नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था'' विकासशील देशों का दृष्टिकोण (सन् 1990 से 2000 तक), 2003 में नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए किये गये प्रयास व विकासशील देशों के योगदान का मूल्यांकन किया गया है। साथ ही भारत की भूमिका पर प्रकाश डाला गया है। नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के परिचय, इतिहास व अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों के सन्दर्भ में यह अध्ययन उपयोगी रहेगा।

अध्ययन के उद्‌देश्य

1. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विकासशील राष्ट्रों के संगठनों की त्वरित स्थापना उनके उद्‌देश्यों तथा सफलता की संभावनाओं का अध्ययन आवश्यक समझ कर यह प्रस्तुत अध्ययन किया जाना है।
2. भारत एक सक्रिय विकासशील राष्ट्र है जो विश्व के अनेकानेक विकासशील राष्ट्रों से बहुत आगे है तथा आर्थिक व राजनीतिक प्रतिष्ठा में भी इस राष्ट्र ने जो प्रगति की है वह निश्चय ही विकसित राष्ट्रों के लिए चिन्ता का विषय है। भारत की अल्प विकासशील देशों के विकास में भूमिका को ध्यान में रखकर अध्ययन किया जाना आवश्यक है।
3. नए अंतरराष्ट्रीय आर्थिक परिवेश में अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों को दृष्टिगत रखते हुए अध्ययन करना भी अध्येयता का उद्‌देश्य है।
4. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर राजनीति केवल राजनीतिक तत्वों द्वारा निर्मित न होकर आर्थिक पक्षों द्वारा नियंत्रित हो रही है। ऐसी दशा में जबकि अर्थ जगत ही भूमण्डलीकरण के रूप में प्रवृत्त हुआ है, इस प्रक्रिया के कारकों, राजनीतिक व आर्थिक तत्वों में सहसंबंध का अध्ययन करने का उद्‌देश्य रखा गया है।
5. राजनीतिक मतभेदों के उपरान्त भी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक मंचों पर विभिन्न देशों की पारस्परिक सहयोगात्मक भावना ने आर्थिक पक्ष की वैश्विक उपादेयता को सिद्ध किया है। यह पक्ष (आर्थिक) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पारस्परिक सहयोग द्वारा संबंधों को बनाए रखने की महत्वपूर्ण कड़ी है। अतः इसका अध्ययन करना अहम उद्‌देश्य है।

परिकल्पना

परिकल्पना के रूप में निम्न अनुत्तरित प्रश्नों का निर्धारण किया गया है–

1. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता एवं राजनीतिक संबंधों को ध्यान में रखते हुए ही यह महसूस किया जा रहा था कि विकास के इन दोनों पक्षों में निहित अंतरसंबंधों को विकासशील देशों, मुख्यतः भारत के संदर्भ में अध्ययन किया जाना आवश्यक है।
2. नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को केवल किसी नए अर्थतंत्र अथवा नए आर्थिक आयामों की स्थापना के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए। वरन यह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक ऐसे परिवर्तन का पर्याय है जिसमें विकासशील राष्ट्र अपनी स्वतंत्र पहचान राजनीतिक अस्तित्व एवं निर्णायक सदस्य के रूप में उभार सके।
3. विश्व के कुछ देशों को छोड़कर अधिकांशतः विकासशील देशों की श्रेणी में है। इसलिए सुदूर स्थित देशों का अध्ययन दुष्कर तो होता ही है, साथ ही उनसे सम्बन्धित शोध सामग्री का संग्रहण असंभव भी होता हैं। अतः प्रस्तुत शोध विषय को एक क्षेत्रीय अध्ययन के रूप में निष्पादित करने के लिए अध्ययन क्षेत्र के रूप में भारत को चुना गया है। भारत की दक्षिण एशिया क्षेत्र में भूमिका को विष्लेषित करने का प्रयास भी किया जा सकता है।
4. नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था व भारत की समस्याओं, संभावनाओं व सहयोगात्मक पहल पर तथ्यपरक विचार किया जा सकता है।
5. भूमण्डलीकरण के युग में उपनिवेशवाद अपने नए रूप नवउपनेशवाद के रूप में प्रचलित हुआ है। आज भारत जैसे विकासशील देशों के समक्ष स्वैच्छिक विकास का सपना अधूरा रहा है, यूरो कूटनीति, यूआन कूटनीति, डॉलर कूटनीति नए आर्थिक हथियारों के रूप में सामने आएं हैं। भारत अन्य विकासशील राष्ट्रों के साथ निरंतर अमेरिकी आधिपत्य तथा उसकी हस्तक्षेप पूर्ण नीति का विरोध करता रहा है। भारत का विकसित राष्ट्रों के प्रति विभिन्न मुद्‌दों पर सहयोगात्मक रूख भी रहा है। तथापि यह अपनी मुक्त अर्थव्यवस्था, स्वतंत्र विकास एवं अन्तर्राष्ट्रीय पहचान को बनाए रखने के लिए कृत संकल्प है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र मूलतः द्वितीयक सूचना स्रोतों पर आधारित है हालांकि प्राथमिक स्रोत भी समाहित किए गए है।

भारत व नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था

भारत में वर्ष 1991–92 में प्रारम्भ किए गए आर्थिक सुधारों तथा उदारीकरण की नीतियों का एक प्रमुख संघटक भूमण्डलीकरण भी रहा है। भारत ने 1991 के पश्चात् भूमण्डलीकरण के लिए व्यापार नीति में उदारीकरण, उदारीकृत विनिमय दर प्रणाली, विदेशी

विनियम नीति में उदारीकरण व विश्व बाजार की धारणा पर बल दिया।[7] तत्कालीन परिस्थिति में भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था को भूमण्डलीकरण से जोड़कर और उदारीकरण की नीति अपनाकर एक अत्यन्त ही साहसपूर्ण कदम उठाया था। पिछले एक–दो दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था का जिस तीव्रगति से विकस हुआ है, वह भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया से ही जुड़ने का परिणाम है । भारत में कई कारणों से भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है, जैसे–विदेशी निवेशकों को देश में आकर्षित करने के लिए उन्हें अनेक प्रकार की रियायतें तथा सुविधाएं देना, घरेलू एवं विदेशी निवेशकों के बीच किसी प्रकार का भेदभाव या पक्षपात न करना, पूँजी–श्रम वस्तुओं–सेवाओं के आयात–निर्यात पर से सभी प्रकार की बाधाएं हटाना, सूचना संचार प्रौद्योगिक का विस्तार, वायु–परिवहन का विस्तार, शिक्षा, चिकित्सा तथा पर्यटन के लिए सभी प्रकार की बाधाओं को समाप्त करना तथा करारोपण की नीतियों को उदार बनाना आदि। इसी के परिणामस्वरूप आज भारत काफी बड़ी सीमा तक शेष विश्व के साथ जुड़ सकता है।

भारत में भूमण्डलीकरण के कई अनुकूल प्रभाव पड़े, जैसे विदेशी मुद्रा कोष में वृद्धि, निर्यात में वृद्धि, प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग में वृद्धि, स्थिर व मजबूत विनिमय दर आदि।[8] भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया से जुड़ने के फलस्वरूप भारत के आयात निर्यात् में सतत् रूप से उच्च दर से वृद्धि हुई है, सूचना संचार प्रौद्योगिक क्षेत्र, ऑटोमोबाइल क्षेत्र आदि में असाधारण रूप से विस्तार हुआ है और भारत का तेजी के साथ शेष विश्व के साथ एकीकरण हो रहा है। भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया से जुड़ने के फलस्वरूप भारत के लाखों लोग विश्व के विभिन्न देशों में रोजगाररत् है। इससे भारतीय संस्कृति और आचार–विचारों का सारे विश्व में प्रसार हुआ है। दूसरी ओर भारतीय उद्यम कमजोर पड़े व कार्य संस्कृति का दुष्प्रभाव पड़ा।[9]

नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में भारत की भूमिका

भारत अपनी स्वतंत्रता के बाद अपने आर्थिक विकास व सामाजिक उत्थान हेतु एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का पक्षधर रहा है जो भेदभाव रहित व न्याय पर आधारित होने के साथ–साथ उसके आर्थिक विकास में मदद कर सके। इसी उद्देश्य के बारे में सोचते हुए ही स्वतंत्रता से पूर्व ही भारत ने संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता के साथ–साथ ब्रिटेनबुड संस्थाओं की सदस्यता प्राप्त कर ली थी। परन्तु शीघ्र ही भारत इन व्यवस्थाओं की कार्य पद्धति से अप्रसन्न हो गया तथा राजनैतिक व आर्थिक रूप से सक्षम व लाभकारी व्यवस्था का पक्षधर बन गया। विकासशील देशों के प्रयासों के आधार पर 1974 में संयुक्त राष्ट्र नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के लिए सहमत हो गया। इसमें भारत भी सतत् रूप से भागीदार रहा है। इस घोषणा को वास्तविकता प्रदान कराने में भारत ने कई प्रकार से सहयोग प्रदान किया है। भारतीय विदेश नीति के मूल उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति को अपनाया जो राजनीतिक व सामरिक गुटबन्दियों से अलग रहकर स्वतन्त्र व निष्पक्ष निर्णय लेने पर बल देती है। भारत की विदेश नीति के सिद्धान्तों व नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सिद्धान्तों में काफी समानता विद्यमान है। भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति को अपने तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे एक आन्दोलन का रूप भी दिया है। इसे तीसरी दुनिया का आन्दोलन बनाकर भारत ने विकासशील देशों के अधिकारों की मांग का समर्थन ही नहीं किया बल्कि एक न्यायोचित परिस्थतियों में लागू करने पर बल दिया है। नई अर्थव्यवस्था की मांग भी इसी न्यायोचित मांग का अहम् हिस्सा है।

भारत नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की घोषणा कराने में ही अग्रसर नहीं रहा है बल्कि अपने सुझावों के द्वारा इसे वास्तविक रूप प्रदान करवाने हेतु भी कार्यरत रहा है। इस घोषणा के सन्दर्भ में बुलाये गये विशेष सत्र को सम्बोधित करते हुए तत्कालीन भारतीय विदेश मन्त्री ने सुझाव दिए कि [10] –कच्चे माल की कीमतों के मूल्योद्वार हेतु व्यापक नीति हो, विशेष रूप से प्रभावित देशों हेतु अतिरिक्त द्रव्यता की व्यवस्था हो, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व अन्य संयुक्त राष्ट्र आर्थिक संस्थाओं में समान वोट का अधिकार हो, विकासशील देशों के विकास हेतु अतिरिक्त पूंजी की व्यवस्था हो तथा विकासशील देशों को वित्तीय व तकनीकी सहायता दी जाए।

इसमें से ज्यादातर सुझावों को संयुक्त राष्ट्र की घोषणा के अन्तर्गत मान्यता दे दी गई। इसी प्रकार के सुझाव तत्कालीन विदेश मंत्री वाई.बी. चव्हाण द्वारा सातवें अधिवेशन में 1975 में दिए गए।[11] इसके अतिरिक्त, उन्होंने आशा व्यक्त की कि केवल परस्पर सहयोग व सहभागिता के आधार पर ही बुद्धिमानी व तर्क संगत रूप से विश्व संसाधनों का उपयोग कर सकते हैं।[12] 30 दिसम्बर 1964 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के एक स्थाई अंग के रूप में अंकटाड की स्थापना हुई। इस संस्था के माध्यम से विकासशील देशों की व्यापार व्यवस्था का विकास करना प्रमुख उद्देश्य तय किया गया। 1964 से आज तक अंकटाड की महत्वपूर्ण गतिविधियां में भारत सशक्त रूप से भागीदार रहा है।[13] सामूहिक तौर पर 'जी–77' के देशों में भारत की भूमिका गिने–चुने कुछ देशों में रहती है जो इस समूह को नेतृत्व प्रदान करते हैं।[14] इसीलिए इस समूह के माध्यम से भी भारत का सतत प्रयास रहता है कि वह इन देशों के व्यापार विकास हेतु अत्यधिक अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करने में सक्षम हो। तीसरी दुनिया के देशों में अपने में से प्रमुख 15 देशों का एक समूह – 'जी–15' का 1 जून 1990 का गठन किया।[15] भारत इस समूह का सदस्य है, भारत ने इन देशों के सामूहिक प्रयास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

निष्कर्ष

विकसित देशों को नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था हेतु सहमत कराना इतना सरल कार्य नहीं है। इसमें भारत अकेला अधिक नहीं कर पायेगा, इसीलिए सामूहिक प्रयासों के परिणाम ज्यादा कारगर रहने की संभावनाएं हैं। यद्यपि भारत की विकासशील देशों में स्थिति के कारण वह इन देशों को एकत्रित करके अपने नेतृत्व के अधीन इस व्यवस्था की स्थापना हेतु संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अवश्य निभा सकता है। विकसित व

विकासशील देशों में आम सहमति बनाने हेतु भारत व इन देशों को चार प्रमुख बातों पर विशेष ध्यान देना होगा –

1. इस परिवर्तन हेतु संघर्ष की बजाय सहयोग का मार्ग ज्यादा श्रेयकर होगा।
2. इन राज्यों के बीच क्षेत्रीय सहयोग की स्थापना प्रथम सोपान का कार्य कर सकती है।
3. भारत अपने अनुभवों, तकनीकों व संसाधनों से विकासशील देशों की सहायता कर सकता है।
4. संयुक्त राष्ट्र की विभिन्न एजेंसियों व अंग के माध्यम से इस सहयोग प्रक्रिया को और सकारात्मक बनाया जा सकता है।

विकसित व विकासशील राष्ट्रों के बीच व्यापक मतभेद व परस्पर विरोधी हितों को देखते हुये ''वार्ताओं द्वारा समाधान'' पर बल दिया गया है। क्योंकि विश्लेषकों का मानना है कि विकासशील देशों के पास किसी भी सौदेबाजी हेतु दबाव की कमी है। इसीलिए इस दिशा में उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सही समूहों (विकसित व विकासशील) के अन्दर सहमति होना आवश्यक है। अतः भविष्य में नई आर्थिक व्यवस्था के गठन हेतु भारत व अन्य विकासशील देशों को निम्नलिखित कदम उठाने होंगे–

1. राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से जोड़ने के कार्य में तेजी लानी होगी।
2. परस्पर राष्ट्रों के बीच अन्तः निर्भरता विकसित करने हेतु कुछ राष्ट्रों पर अत्यधिक निर्भरता को छोड़ना पड़ेगा।
3. विश्व कार्यक्षमता को तीव्र करना होगा।
4. व्यवस्था में अभूतपूर्व व टेढ़े–मेढ़े परिवर्तनों से बचना होगा।
5. विकसित व विकासशील देशों के जीवन स्तर, विशेषकर पर्यावरण प्रदूषण के संदर्भ को समान रूप से सुधारना होगा।
6. समानता पर आधारित व्यवस्था पर अधिक बल देना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज, ए 5559, जी. ए. रेजो. 3201 पूरक एस (VI) छठा विशेष अधिवेशन 1974*
2. *संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज, ए 5559, जी. ए. रेजो. 3201 पूरक एस (VI) छठा विशेष अधिवेशन 1974 पृ.87*
3. *उपर्युक्त, पृ.87*
4. *तपन विस्वाल, 2013, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, मैकमिलन पब्लिशर्स इण्डिया लि. देहली, पृष्ठ 269*
5. *उपर्युक्त पृष्ठ. 269*
6. *डॉ. पुष्पेश पंत, श्री पाल जैन, डॉ. राखी पंचौला, अन्तर्राष्ट्रीय संबंधः सिद्धान्त और व्यवहार, 2016–17, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ. 303–304*
7. *डॉ. पुष्पेश पंत, श्री पाल जैन, डॉ. राखी पंचौला, अन्तर्राष्ट्रीय संबंधः सिद्धान्त और व्यवहार, 2016–17, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ. पृष्ठ. 304–305*
8. *डॉ. पुष्पेश पंत, श्री पाल जैन, डॉ. राखी पंचौला, अन्तर्राष्ट्रीय संबंधः सिद्धान्त और व्यवहार, 2016–17, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ. पृष्ठ. 306*
9. *डॉ. पुष्पेश पंत, श्री पाल जैन, डॉ. राखी पंचौला, अन्तर्राष्ट्रीय संबंधः सिद्धान्त और व्यवहार, 2016–17, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ. पृष्ठ. 307*
10. *संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज, ए/9559, जी.ए.ओ.आर. 2223, प्लानियरिंग बैठक, छठा विशेष अधिवेशन, 19 अप्रैल 1974, पृ. 7*
11. *यू.एन. मंथली करोनिकल, वाल्यूम 12, अंक 9, अक्टूबर, 1975*
12. *यू.एन. मंथली करोनिकल, वाल्यूम 12, अंक 9, अक्टूबर, 1975*
13. *प्रतियोगिता दर्पण/मार्च/2012/1479/5, 70–75*
14. *डॉ. अरूणोदय वाजपेयी ''भारत की आर्थिक कूटनीति : नई प्राथमिकतायें एवं उभरती प्रवृतियां' वर्ल्ड फोकस अगस्त 2013, पृ. 3–10*
15. *डॉ. अरूणोदय वाजपेयी ''भारत की आर्थिक कूटनीति : नई प्राथमिकतायें एवं उभरती प्रवृतियां' वर्ल्ड फोकस अगस्त 2013, पृ. 3–10*

वेबसाइट

1. *www.google.com*
2. *www.wikipedia.org*